International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(III), April- June, 2025, pp. 49-59

भारतीय राजनीति में जयप्रकाश नारायण का अवदान—समग्र मूल्यांकन

परमांनद शर्मा*

सह—आचार्य, राजनीति विज्ञान, गोमती देवी महाविद्यालय, बडागाँव, झुन्झुनू, राजस्थान।

*Corresponding Author: nvnjn0470@gmail.com

सार

जयप्रकाश नारायण भारत में राजनीतिक चिन्तन की दो निरन्तर चलने वाली परम्पराओं में से एक का प्रतिनिधित्व करते दिखते हैं। देश के राजनीतिक विचारकों की एक परम्परा उनकी है जिनकी विशिष्टता अपने जीवन के विविध चरणों में लगभग स्पष्ट विचारधाराजन्य निरन्तरता रखने की रही है उन्हें रूढ़िवादी विचारक कहा जा सकता है। इनके विपरीत भारतीय राजनीतिक चिन्तन की दूसरी परम्परा में वे लोग हैं जिनके बौद्धिक रूप से अति उर्वर मस्तिष्क में असाधारण गतिशीलता रही जो अनुभव की दृष्टि से अति वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व के विचारक रहे। जय प्रकाश नारायण भारत के राजनीतिक चिन्तन की दूसरी परम्परा के प्रतिरूप दिखते हैं।

शब्दकोशः *भारतीय राजनीति, बौद्धिक रूप, राजनीतिक चिन्तन, वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व, अवदान—समग्र मूल्यांकन।*

प्रस्तावना

जय प्रकाश नारायण का जीवन भारत के मेहनतकश बहुसंख्यकों के सामाजिक—आर्थिक व राजनीतिक जीवन को सुधारने के लिए उचित मार्ग की अन्तहीन तलाश का जीवन रहा। 1920 के दशक में उनके जीवन में उद्विग्नतापूर्ण परिवर्तन आए और नई परिस्थितियों और सन्दर्भों से उनके परिचय के कारण उनका जीवन निर्धारित मार्ग पर नहीं चल सका। उदाहरण के लिए 1921 में उनके अध्ययन में बाधा आई, जब मौलाना आजाद के आह्वान पर उन्होंने पढ़ाई छोड़ने का मानस बना लिया और गाँधी द्वारा संचालित राष्ट्रवादी आन्दोलन में सम्मिलित हो गए।

राष्ट्रवादी आन्दोलन में जे.पी. के बढ़ते झुकाव को देखते हुए उनके परिजनों ने उन्हें उच्च अध्ययन के लिए विदेश जाने के लिए प्रेरित किया। परिणामस्वरूप वे कैमिकल इन्जीनियरिंग की डिग्री के लिए अमेरिका पहुंच गए। लेकिन देश और विदेश में लोगों की समस्याओं की गहन समझ के प्रति उनके मन में जिज्ञासा तथा इन समस्याओं के समाधान का हिस्सा बनने की उनकी इच्छा ने उन्हें इन्जीनियरिंग का अध्ययन छोड़ने तथा विसकोनसिन विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र का अध्ययन करने के लिए बाध्य किया। यह सम्भवतः उनके जीवन का निर्णायक मोड था क्योंकि समाजशास्त्र में उनके गहन ज्ञान ने उनके दिमाग को मार्क्स तथा एम.एन. राय जैसे मार्क्सवादी विचारकों के क्रान्तिकारी विचारों में गहराई तक डुबो दिया, परिमणामस्वरूप वे भारत के सर्वाधिक रूढ़िवादी मार्क्सवादी गए। भारत में व्याप्त सामाजिक—आर्थिक समस्याओं की मार्क्सवादी—लेनिनवादी विचारधाराजन्य संरचना में समाधान के विश्वास के कारण देश में समाजवादी सामाजिक—आर्थिक व्यवस्था लाने के लिए जे.पी. ने क्रान्तिकारी परिवर्तन की व्यापक रूपरेखा बनाई ।[1]

सन् 1929 में भारत वापस आने पर उन्होंने भारत में समाजवाद को व्यावहारिक बनाने की तीव्र इच्छा के कारण शीघ्र ही राष्ट्रवादी आन्दोलन में सम्मिलित हो गए। सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समय नासिक जेल में रहते हुए अपने जैसे विचारों के कई राष्ट्रवादियों के सम्पर्क में आए जिसके परिणामस्वरूप अप्रैल 1934 में कांग्रेस

सोशलिस्ट पार्टी का गठन हुआ। देश में समाजवादी आन्दोलन को सशक्त करने के उद्देश्य से 1934 में पटना में उन्होंने अखिल भारतीय समाजवादी सम्मेलन का आयोजन भी किया, लेकिन मार्क्सवाद के प्रति उनका लगाव इतना दृढ़ था कि 1936 में जे.पी. ने एक छोटी विचारोत्तेजक पुस्तिका ''व्हाइ सोशलिज्म'' सी.एस.पी. के तत्वावधान में प्रकाशित की जिसमें कहा कि पहले से कहीं ज्यादा आज यह कहना सम्भव है कि समाजवाद – मार्क्सवाद सिर्फ एक ही तरह का सिद्धान्त है इस पुस्तिका का उद्देश्य मूलतः साम्यवाद व समाजवाद में विश्वास रखने वालों के समक्ष विचारधाराजन्य साम्य प्रस्तुत करना था तथा सी.एस.पी के विचारों और कार्यों की रूपरेखा का वर्णन करना था।

सन् 1930 के दशक में उनका मार्क्सवादी चरण जारी रहा, जिसके बाद वे प्रजातांत्रिक समाजवाद के दर्शन की ओर बढ़े तथा अन्ततः स्वतंत्रता के पश्चात वे सर्वोदयी हो गए। जे.पी. के जीवन में इस विचारधाराजन्य परिवर्तन की व्याख्या आवश्यक है क्योंकि एक ऐसी विचारधारा, जिसे वे जीवन के एक समय में देश के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के लिए एकमात्र संरचना मानते थे, से मोहभंग के कारण क्या थें? यथार्थतः मार्क्सवाद की विचारधारा से जे.पी. का मोहभंग बोल्शेविक क्रान्ति के पश्चात के घटनाक्रम के आलोचनात्मक मूल्यांकन के कारण हुआ। सर्वहारा के अधिनायकत्व के स्थान पर स्टालिन के नेतृत्व में सेना तथा नौकरशाही की समान तानाशाही की स्थापना ने जे.पी. को दुखी होकर अपने मार्क्सवादी के सैद्धान्तीकरण पर दार्शनिक तथा व्यावहारिक दोनों ही धरातल पर पुनर्विचार करने के लिए बाध्य किया।[2]

स्पष्ट रूप से जयप्रकाश नारायण द्वारा मार्क्सवाद की दार्शनिक आलोचना सम्भवतः उनके गाँधी की तकनीकी जैसे सत्याग्रह, अहिंसा तथा साध्य–साधन के द्वन्द्व पर स्वस्थ विचारों में बढ़ती पसन्द के कारण निर्धारितं हुई। उदाहरण के लिए एक समय, जे.पी. गाँधी के संघर्ष के शन्तिप्रिय साधनों के धीमेपन के आलोचक थे तथा उन्होंने समाज के शीघ्र सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के लिएसमाजवादी साधनों के प्रयोग का समर्थन किया। लेकिन सोवियत यूनियन में, कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति लोगों की आज्ञाकारिता के लिए हिंसक तथा बल आधारित साधनों के प्रयोग तथा स्टालिन के समय में देश के औद्योगीकरण की गति तीव्र करने के लिए श्रमिकों से अत्यन्त दबावकारीतथा बलपूर्वक काम लेने के अनुभवजन्य सच्चे प्रमाण मिले तो उन्होंने आत्मावलोकन किया। वे अन्ततः गाँधी के इस विचार सेसहमत हुएकि पवित्र उद्देश्यों को पाने के लिए साधनों की पवित्रता भी आवश्यक है। उन्हें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि क्या अच्छे लक्ष्य बुरे साधनों से प्राप्त किए जा सकते हैं तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मार्क्सवाद के अन्तर्गत साधनों की सम्पूर्ण सच्चाई पर केन्द्रीकरण से, भारत जैसे पिछडे देश में वांछित परिवर्तन के लिए सम्भावित विचारधाराजन्य आधार प्राप्त नहीं होता।

स्पष्टतः राजनीतिक चिन्तन के नैतिक आधार के प्रभाव के साथ ही भारत में गाँधी के नेतृत्व में आन्दोलन के कारण जे. पी. द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी जो मार्क्सवाद का आधार था, के आलोचक हो गए। उनका कहना था कि मानव के व्यक्तित्व में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही तत्व होते है। अतः दोनों का संतुलित विकास मानव तथा समस्त समाज के सम्पूर्ण विकास के लिए आवश्यक है। लेकिन उन्होंने पाया कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की पद्वति समस्त सामाजिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण भौतिकवाद की पद्वति समस्त सामाजिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण भौतिकवाद के अन्तर्गत ही करती है। परिणामतः समाज तथा मानव का आध्यात्मिक विकास अवरूद्ध हो जाता है। और दोनों का असंतुलित विकास होने लगता है। अतः उन्होंने निष्कर्ष दिया कि एक दार्शनिक दृष्टिकोण के रूप में भौतिकवाद नैतिक व्यवहार तथा अच्छाई के लिए प्रोत्साहन का कोई आधार प्रदान नहीं करता ।

जे.पी. ने मार्क्सवादी की अन्य कई आधारभूत अवधारणों पर भी अपनी शंका प्रकट की। उदाहरण के लिए वे समाजवादी राज्य के लिए सर्वहारा वर्ग के अनियकवाद की सुनिश्चित आवश्यकता के विचार से सहमत नहीं थे। उन्होंने स्वीकारा कि सर्वहारा के अधिनायकवाद का विचार पूंजीवाद से समाजवाद की ओर परिवर्तित हो रहे समाज में ही प्रासंगिक है। इसके अतिरिक्त, ऐसे विचार उसी समाज केलिए व्यावहारिक हैं जहाँ शान्तिपूर्वक साधनों से इस प्रकार का परिवर्तन लाना सम्भव न हो। अतः उन्होंने इसे मार्क्सवादी सिद्धान्तवादियों की गलती

माना जिन्होंने सर्वहारा के आनायकवाद को, पूंजीवादी से समाजवादी राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन के लिए एक मात्र आवश्यक तरीका माना। इसके विपरीत, उन्होंने माना कि समाजवादी राज्यकी प्रकृति ऐसी होनी चाहिए कि समाज में किसी भी प्रकार के अधिकनायकवाद की आवश्यकता न हो। अतः उन्होंने कहाकि समाजवादी राज्य में सर्वहारा के अधिनायकत्व के लागू होने को आवश्यकमानना मार्क्सवादी सिद्धान्त की कमी है।[3]

व्यावहारिक धरातल पर उन्होंने क्रान्ति की प्रकृति तथा उसके भविष्य के अन्तः सम्बन्ध जैसा कि रूस की सोवियत क्रान्ति से स्पष्ट हुई, को लेकर अत्यन्त निराश थे। उन्होंने स्वीकारा कि सोवियत क्रान्ति के दो भाग हैं– पुरानी सामाजिक व्यवस्था का विनाश तथा नए का निर्माण। सफल हिंसक क्रान्ति में, प्राचीन व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकने में सफलता निहित है। यह वास्तव में एक बड़ी उपलब्धि है। लेकिन एक बिन्दु पर, कुछमहत्वपूर्ण घटना है जो सफलता की प्रक्रिया को दबा देता है। क्रान्ति के समय पुनर्गठित क्रान्तिकारी हिंसा फैल जाती हैं जब हिंसा के साथ अन्य, तत्व, जिनके विस्तार में जाने की यहां आवश्यकता नहीं है तो असंगठित जनहिंसा को रोकना और इसके लिए क्रान्ति की रक्षा तथा उचित ठहराते के लिए हिंसा के संगठित साधन सृजित किये जाते है इस प्रकार शक्ति के एक नए यंत्र की रचना होती है और क्रान्तिकारियों में जो भी इस नए यंत्र को हासिल करने में सफल होते हैं वे ओर उनके दल या विरोधीनए शासक बन जाते हैं। वे नए राज्य के स्वामी हो जाते हैं और शक्ति लोगों के हाथों से निकलकर उनके हाथों में पहुंच जाती है। उच्च– शिखर पर सदैव सत्ता के लिए संघर्ष होता है, सिर फूटते है और रक्त बहता हैं, अंत में विजय उनकी होती है जो सर्वाधिक दृढ़, सर्वाधिक निर्दय तथा सर्वाधिक संगठित होते है। ऐसा नही है कि हिंसक क्रान्तिकारी छल या धोखा करते हैं, अपितु हिंसा का तर्क इसी तरह का परिणाम देता है। यह अन्यथा नही हो सकता।[4]

जयप्रकाश नारायण के मार्क्स से सर्वोदय तक के परिवर्तन में स्टालिन के शासनकाल में सोवियत यूनियन में मैकियावेली की राजनीतिक प्रक्रियाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। स्टालिन के सोवियत राजनीतिक व्यवस्था की दो महवपूर्ण विशेषताओं ने उन्हें सम्भवतः सर्वाधिक व्यथित किया। प्रथम सर्वहारा के अधिनायकवाद की निहित स्थापना से सोवियत यूनियन का विश्व का सर्वाधिक बंद देश बन जाना सुनिश्चित हो गया। न केलव शेष विश्व से किसी प्रकार की अन्तःक्रिया की आज्ञा नहीं थी अपितु देश के भीतर भी लोगों के निजी और नागरिक जीवन में प्रजातांत्रिक मूल्यों और मानकों की ओर अनुपस्थिति उस व्यवस्था की विशिष्टता हो गई। पश्चिमी समाज में प्रजातांत्रिक जीवन शैली के अपने अनुभव तथा भारत के राष्ट्रवादी आन्दोलन में प्रजातांत्रिक मूल्यों की महत्ता के कारण यह स्थिति जे.पी. को अत्यन्त व्याकुल करने वाली थी। दूसरे सोवियत संघ द्वारा साम्यवादी देश के राजनीतिक विरोधियों के साथ क्रूर तथा गुप्त तरीकों को भी जे.पी. ने पसन्द नहीं किया । लाल सेना, गुप्तचर पुलिस तथा नौकरशाही की संस्थाओं को साम्यवाद में विश्वास न करने वालों को पीड़ा देने, समाप्त करने, कष्ट देने यहां तक कि हत्या करनेकी खुली छूट ने उनका का सोवियत व्यवस्था की सरकार से मोहभंग करदिया। यह उनके लिए इतना अधिक आँख खोलने वाला था कि उन्होंने स्वयं को इतिहास के इस चरण से शिक्षा लेने केलिए तथा इससे दूर जाने के लिए सचेत कियझं[5]

अंतिम विश्लेषण में जे.पी. के अनुसार सोवियत संघ में साम्यवाद के संचालन की मूल कमी, लेनिन का साम्यवाद को हिंसा के द्वारा व्यावहारिक रूप देने का प्रयास तथा स्टालिन की पिछड़ी अर्थव्यवस्था में औद्योगिकरण की अति दबावकारी तथा जोर जबरदस्ती की प्रक्रिया के प्रयोग के प्रयास की थी। अपनी प्रकृति के कारण बिना कठोर तरीके से नियमों के लागू करने दबाव तथा स्वतंत्रता के हनन के बिना ऐसा कर पाना सम्भव नहीं था। सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के लिए इस प्रकार की सत्तापरक शैली ने उन्हें एक ऐसे प्रतिमान के लिए प्रेरित किया जिससे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन शांतिपूर्ण तथा प्रजातांत्रिक पद्धति से लाया जा सके। अतः उन्होंने भारतीय समाज में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के लिए गाँधीवादी पद्धति की सच्चाई पर विश्वास करने का विचार यह कहकर किया– (अ) जिस समाज में लोगों के लिए शांतिपूर्वक और प्रजातांत्रिक साधनों से सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन लाना संभव हो, वहां हिंसा को अपनाना क्रान्ति विरोधी होगा, तथा (ब) समाजवाद, प्रजातांत्रिक स्वतंत्रता की अनुपस्थिति में अस्तित्व में नहीं रह सकता, न सृजित किया जा सकता है।

सामाजिक–आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के मार्क्सवादी उदाहरण तथा उसके व्यावहारिक प्रदर्शन के प्रति उन की बढ़ती निराशा ने देश की आवश्यकता के अनुरूप वैकल्पिक व्यवस्था विकसित करने के लिए उन्हें प्रेरित किया। स्वातंत्र्योतर काल में संविधान की स्वीकृति को अधिकतर लोगों ने सकारात्मक रूप में ग्रहण किया था। क्योंकि उन्हें उम्मीद थी कि यह राष्ट्रीय आन्दोलन की अपेक्षाओं को पूरा करेगा फिर भी जे.पी. जैसे लोगों का शीघ्र ही देश की प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था की कार्यप्रणाली से मोहभंग हो गया। बाद में जे.पी. बहुत से यूरोपीय देशों की यात्रा पर निकल पड़े ताकि साक्षात रूप से इन देशों की सरकारों की संरचना तथा कार्यप्रणाली का अनुभव कर सकें। अधिकतर सरकारों की व्यवस्था की सरंचना में जो एक मूल कमी जे.पी. ने पाई, जो भारत में भी 1950 में संविधान के क्रियान्वित होने के बाद व्याप्त थी, वह सरकार के उच्च स्तर पर शक्ति के केन्द्रीकरण की थी। इससे जे.पी. को बहुत कष्ट हुआ, क्योंकि एक सच्चे प्रजातांत्रिक होने के नाते वे सत्ता को लोगों के हाथों में निहित देखना चाहते थे। तथा उतनी ही सत्ता को उच्च स्तर पर हस्तान्तरित करना चाहते थे। जितनी कि अति आवश्यक हो । अतः भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति तथा संरचना के व्यापक पुनर्सकल्पीकरण के विचार को ठोस रूप से देने के लिए उन्होनें 1959 में एक पुस्तक 'ए प्ली फॉर द रिकन्सट्रक्शन ऑफ इण्डियन पॉलिटी' प्रकाशित की।

भारतीय शासन पद्वति के पुनर्निर्माण को प्रस्तुत करते हुए वे अरविन्द के विचारों से अत्यधिक प्रभावित दिखते हैं क्योंकि उनमें उन्हें असाधारण अन्तः ज्ञान स्फूर्त दृष्टि दिखी जिसने भारतीय राज्य पद्धति के आधार की सच्ची प्रकृति को बिल्कुल स्पष्ट कर दिया। अरविन्द के द्वारा प्रस्तुत तर्कों का अनुसरण करते हुए जे.पी. को प्राचीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, जो आत्मशासित ग्रामीण समुदाय की विशिष्टता पर आधारित थी, की सच्चाई पर विश्वास था। जयप्रकाश नारायण का प्राचीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की निर्विवाद प्रशंसा इतनी स्पष्ट थी कि उन्होंने माना कि स्वातंत्र्योतर भारत की राजनीतिक व्यवस्था का अवधारणीकरण ओर कुछ नहीं अपितु एक प्राचीन वंश द्वारा अपनी खोई हुई आत्मा की पुनः खोज का प्रश्न है इस प्रकार उनका भारतीय शासन व्यवस्था के निर्माण का आह्वान ग्राम आधारित राजनीतिक व्यवस्था की पुनः खोज तथा स्थापना थी, जिस व्यवस्था के कार्यकरण के अन्तर्गत विकेन्द्रीकरण सहज रूप से प्रवाहित हो।[6]

अभिप्राय यह है कि उन्होंने भारत की वर्तमान राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्था जो संसदीय प्रजातंत्र तथा केन्द्रीकृत योजना पर आधारित है, के स्थान पर सामुदायिक प्रजातंत्र तथा विकेन्द्रीकृत राजनीतिक अर्थव्यवस्था से स्थापित करने को कहा। वस्तुतः जे.पी. प्रजातंत्र की संसदीय व्यवस्था के कड़े आलोचक थे अतः हर सम्भव दृष्टि से इसे अस्वीकार करते थे पर जे.पी. के अनुसार इस प्रकार की व्यवस्था के प्रजातंत्र की सबसे असहनीय कमी इसमें अन्तर्निहित केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति थी जो स्वयं अपनी ही विरोधी प्रतीत होती थी। दूसरे शब्दों में प्रजातंत्र के विचार की इस तरह से अवधारणा नहीं कि जा सकती कि यह केन्द्रीकरण की ओर ले जाए या उसका समर्थन करे। चूंकि संसदीय व्यवस्था निश्चित रूप से केन्द्रीकरण की आरे बढ़ती है अतः यह भारत के लिए सरकार का सर्वोत्तम स्वरूप नहीं हो सकती ।

''सामूदायिक प्रजातंत्र'' के विचार को, जैसा कि जे.पी. ने प्रस्तुत किया, राजनीतिक प्रक्रिया बिल्कुल भिन्न है। जो संसदीय प्रजातंत्र की राजनीतिक प्रक्रियाओं की प्रकृति को दर्शाते गुणों के ठीक विपरीत है। उदाहरण के लिए, संसदीय प्रजातंत्र का आवश्यक तत्व राजनीतिक दलों में सत्ता प्राप्ति तथा राजनीतिक व्यवस्था में अपने महत्व के लिए गहरी प्रतिस्पर्धा है। इसके विपरीत, जे. पी. का सुझाव है कि सामुदायिक प्रजातंत्र का आवश्यक तत्व सहयोग व साथ बांटने में है, क्योंकि एक व्यवस्था को समाज के सभी हितों को आवश्यक महत्व प्रदान करना चाहिए जो देश के राजनीतिक निर्णय निर्माण में समन्वयात्मक रूप से परिलक्षित हों। स्वाभाविक रूप से प्रजातंत्र की ऐसी अवधारणा में जे. पी. का जोर संसदीय व्यवस्था की भौतिकवादी तथा सत्ता केन्द्रितं प्रकृ ति के विपरीत प्रजातंत्र के नैतिक और आचार सम्बन्धी आचार पर था। अतः उनके अनुसार सामुदायिक प्रजातंत्र का प्रमुख कार्य नैतिक पुनर्जीवन को उदाहरण, सेवा, त्याग तथा स्वयंसेवी कार्यकर्त्ताओं के ढेर सारे स्नेह से प्राप्त करना है।

भारतीय राज व्यवस्था के पुननिर्माण के अवधारणात्मकता के तर्क में उनकी मुख्य चिन्ता देश में प्रतिनिध्यात्मक प्रजातंत्र की पहेली को सुलझाने की थी ठोस रूप में, भारतीय राज–व्यवस्था के पुनर्निर्माणवाद व्यवस्था पर आधारित है जो प्राचीनकाल में देश में पंचायती राज के विचार में व्यावहारिक रूप में परिलक्षित हुई। यह आवश्यक रूप से पिरामिड की तरह का प्रजातंत्र होगा जिसमें सत्ता जड़ जमीन तक फैली हुई होगी जो जनता के इच्छा की अनुरूप वास्तविक सरकार होगी। इस प्रकार जे.पी. का मॉडल अधिक विकेन्द्रीकृत सरकार के चार खम्भे के प्रतिमान जैसा कि राममनोहर लोडिया ने सुझाया था, पर आधारित होगा । भिन्न रूप से कहें तो लोहिया ने जबकि सरकार मे चार स्तर ग्राम, जिला, राज्य तथा केन्द्र सुझाए थे, जे.पी. ने स्थानीय स्तर पर सरकार के चार स्तर ग्राम, जिला, राज्य तथा केन्द्र सुझाए थे, जे.पी. ने स्थानीय स्तर पर सरकार के आधार को ग्राम तथा जिले के बीच मध्यवर्ती स्तर को जोड़कर इसका विस्तार कर दिया ताकि स्थानीय सरकार की कार्यात्मक आवश्यकताओं को सशक्त बनाया जा सके। इस प्रकार जे.पी. ने पांच स्तरीय विकेन्द्रीकरण राज–व्यवस्था, जिसमें गाँव, खण्ड जिला, प्रान्त तथा केन्द्र सम्मिलित हैं का सुझाव दिया।[7]

भारतीय राज–व्यवस्था के पुनर्निर्माण की जे.पी. की योजना पंयायती राज व्यवस्था को पुनर्जीवित तथा सशक्त करने, जिसे वे नीचे से स्वराज कहते हैं, पर बल था । इस संरचना में राजनीतिक संगठन की सबसे नीचे की इकाई ग्राम सभा होगी जिसमें गाँव के सभी वयस्क शामिल होंगे। सरकार और उसकी कार्यवाही में गांव के सभी वयस्क निवासियों की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए मुख्यतः संवाद की संस्था होने के कारण, ग्राम सभा अपने में पांच या ज्यादा सदस्य सामान्यतया सहमति से चुनेगी, जिससे कार्यकारिणी गठित होगी जिसे ग्राम पंचायत कहा जाएगा। इस प्रकार इन पंचों, जो व्यवस्था के दैनिक काम की देखभाल करेगे के माध्यम से ग्राम सभा जे. पी. द्वारा अवधारित जमीनी प्रजातंत्र की प्रहरी के रूप में काम करेगी।

पंचायती राज की विभिन्न इकाईयों में जैविक सम्बन्ध स्थापित करते हुए जे.पी. ने दो और अन्तर्गुम्फित संस्थाओं के सृजन का सुझाव दिया। पंचायती राज का मध्यम स्तर खण्ड की प्रशानिक इकाई में स्थित होगा जिसे पंचायत समिति के नाम से जाना जाएगा। ग्राम सभा बनाने वालों के प्रतिनिधियों से निर्मित पंचायत समिति के कार्य का क्षेत्र ग्राम सभा बनाने वालों के प्रतिनिधियों से निर्मित पंचायत समिति के कार्य का क्षेत्र ग्राम सभा के समान ही होगा। क्रियात्मक रूप से पंचायत समिति का उत्तरदायित्व सभाओं की गतिविधियों को नेतृत्व प्रदान करना व उनमें समन्वय करना होगा जिसमें विशेष ध्यान विकास परियोजनाओं के निर्माण तथा क्रियान्वयन पर होगा। पंचायती राज के शीर्ष को जिला पंचायत या जिला परिषद् के रूप में संकल्पीकृत किया गया जो पंचायत समिति के सदस्यों द्वारा गठित होगी। जिला परिषद् का कार्य क्षेत्र सामान्यतया पंचायत समिति द्वारा प्रारम्भ व स्वीकृत की गई विकास परियोजनाओं को समायोजित व सुव्यवस्थित करना होगा ताकि उनकी तकनीकी और आर्थिक व्यावहारिकता को सुनिश्चित किया जा सके। पंचायती राज के तीनों स्तरों में जो एक बात समान होगी वह यह प्रयास होगा कि वह लोगों को अपने कार्यों के प्रबन्ध में भागीदारी तथा प्रजातंत्र की सच्ची भावना का आनन्द उठाने के अवसर प्रदान करें।

यद्यपि जे.पी. द्वारा समर्थित सामुदायिक प्रजातंत्र में पंचायती राज निकायों की प्रमुखता होगी, पर वे प्रान्त तथा केन्द्र स्तरीय सरकारों की आवश्यकता को भूले नहीं थे। उनके द्वारा अवधारित सरकार के तीन स्तरों की विशिष्टता यह थी कि वे उन्हें अपने कार्य क्षेत्र तक सीमित रखना तथा नीचे के स्तर के प्रजातांत्रिक संस्थानों को दबा देने के प्रलोभन से बचे रहने देना चाहते थे। इस प्रकार जे.पी. ने भारत में राज–व्यवस्था की प्रजातांत्रिक तथा संघात्मक संरचना के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किये ताकि प्रजातांत्रिक सरकार की सच्ची भावना प्रवाहित हो और यह लोगों को उपलब्ध हो। इसके अतिरिक्त इसके लिए राजनीतिक व्यवस्था को, अनेक आदिम और विभाजक उद्देश्यों पर आधारित दलगत राजनीति से वे मुक्त करना चाहते थे। क्योंकि ये समाज के प्रभुता सम्पन्न भ्रष्ट तत्वों के स्वार्थी हितों को पूरा करने का काम करती है।

भारतीय राज व्यवस्था के पुननिर्माण की योजना का महत्वपूर्ण तत्व, जैसा कि जे.पी. द्वारा सुझाया गया, आर्थिक व्यवस्था का पुननिर्माण भी था। पूंजीवादी समाज में प्रचलित शोषक तथा प्रतियोगी आर्थिक व्यवस्था के

घोर विरोधी होने के कारण उन्होंने भारतीय आर्थिक व्यवस्था के सहयोग, सहअस्तित्व तथा सहभागिता के सिद्धान्त के आधार पर पुनर्निमाण पर बल दिया। उन्होंने भारतीय योजना व्यवस्था में केन्द्रीकरण को अनुचित माना और योजना व्यवस्था को विकेन्द्रीकृत तथा गैर राजनीतिक बनाने के लिए उसकी पुनर्रचना पर बल दिया। देश की राजनीतिक व्यवस्था के जड़–जमीन तक संप्रेषित होने के नमूने पर जे.पी. ने देश की योजना व्यवस्था को भी ग्रामीण स्तर तक ले जाने की बात कहीं। उनका मानना था कि विकास योजनाओं का निर्माण ग्राम स्तर से प्रारम्भ होना चाहिए, जिनका क्रमिक रूप से खण्ड व जिला स्तर तक समायोजन व सुव्यवस्थीकरण भी हो। राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर योजना व्यवस्था को, स्थानीय स्तर की योजनाओं के निर्माण तथा क्रियान्वयन में तकनीकी तथा तार्किक समर्थन प्रदान करने तक ही सीमित रखना चाहिए। देश के आर्थिक विकास में क्षेत्रीय संतुलन व समन्वय के लिए भी जे. पी. ने विचार व्यक्त किये। अतः जे.पी. के विचारों में देश की पुनर्निमित अर्थव्यवस्था, देश के सामान्य लोगों के लिए सच्चे स्वराज्य को क्रियान्वित करेगी।

भारतीय राज व्यवस्था के पुननिर्माण लिए जे.पी. के विचारों में भावनात्मक तथा ऊपरी तौर पर तार्किक निरन्तरता दिखने के बावजूद विद्वानों द्वारा उनकी योजनाओं को काल्पनिक कहकर आलोचना की गई, जो जे.पी. की कल्पना के आश्चर्यलोक के अनुकूल हो सकती है। जे. पी. की योजना की एक सामान्य आलोचना, उनके द्वारा वर्तमान समय में अनुपयोगी हो चुके प्राचीन भारत के विचार को पुनर्जीवित करना और उसके क्रियान्वयन पर जोर देने को लेकर रही है। इसके अतिरिक्त पंचायती राज पर स्वांतत्र्योत्तर भारतीय राज व्यवस्था में मुख्य कारक के रूप में, असंतुलित रूप से ध्यान देना उसकी व्यावहारिक मुख्य कारक के रूप में असंतुलित रूप से ध्यान देना उसकी व्यावहारिक आदर्शवादिता की दृष्टि से विवेकहीन लगता है। अतः कुछ वर्षों में जे.पी. भारतीय राज व्यवस्था के पुनर्निर्माण के अपने तर्कों की व्यावहारिक उपयोगिता के प्रति स्वयं शंकित हो गए थे तथा अपने ध्यान को उन्होंने सर्वोदय की ओर मोड़ दिया ।

देश की विकेन्द्रित सहभागी तथा समतामूलक सामाजिक–आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के लिए जे. पी. की सर्वोदय की अवधारणा उनकी दृष्टि को समन्वित रूप से स्पष्ट करने के लिए गाँधी से ग्रहण की थी। सर्वोदय की मूल भावना का वर्णन करते हुए विनोवा भावे ने लिखा, ''सर्वोदय का अर्थ अच्छी सरकार या बहुमत का शासन नहीं है बल्कि सरकार से स्वतंत्रता है, इसका तात्पर्य सत्ता के विकेन्द्रीकरण से है इस प्रकार से अवधारित सर्वोदय का तात्पर्य राज्य की ऐसी व्यवस्था से है जहाँ विदेशी या बाहरी शासक द्वारा शासित होने की भावना पूरी तरह से अनुपस्थिति होती है तथा लोग अपने जीवन के व्यवसाय का बिना बाहरी दबाव के आनन्द उठाते हैं। अतः सर्वोदय के विचार के पूर्ण क्रियान्वयन के लिए सरकार की अनुपस्थिति सर्वप्रथम आवश्यक है। फिर भी यदि सरकार अस्तित्व में रहती है तो सत्ता सम्बन्ध इतने विकेन्द्रीकृत होने चाहिए कि कोई भी किसी दूसरे के दासत्व में स्वयं को न पाए। इस सैद्वान्तिक संरचना के अन्तर्गत जे.पी. ने अपने सर्वोदय की सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि की रूपरेखा प्रस्तुत की।''

सर्वोदय सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करते हुए जे.पी. मानव स्वभाव के अन्तर्निहित गुणों की खोज से प्रारंभ करते हैं। यद्यपि समाज व व्यक्ति में बुरी भावनाओं तथा प्रोत्साहनों के अस्तित्व को वे स्वीकार करते हैं, पर वे मानते है कि उन्हें दया तथा अहिंसा के गुणों से जीता जा सकता है। इसके अतिरिक्त जीवन में सहयोग दया, सृजनात्मकता तथा शाश्वत आनन्द को सम्मिलित करके, लोगों की अच्छी भावनाओं और प्रोत्साहनों को उजागर किया जा सकता है तथा उन्हें सुखी तथा शांतिपूर्ण जीवन प्राप्त करने में ऐसे गुणों के महत्व को समझाया जा सकता है। सर्वोपरि अगर ऐसे जीवन दृष्टिकोण के उदाहरण प्रमुखता पाएं तथा लोगों को इस दिशा में यथोचित शिक्षा दी जाए तो वे निश्चित रूप से अच्छे कार्यों को करेंगे तथा अच्छे व्यक्तियों का अनुसरण करेगे। इस प्रकार जे. के प्रस्तावित सर्वोदय व्यवस्था की जड़ में सामान्य लोगों में अंतनिर्हित अच्छी तथा सकारात्मक प्रकृति में दृढ़ विश्वास परिलक्षित होता है। जिसे भारत की न्यायोचित समतामूलक तथा प्रजातांत्रिक रूप से विकेन्द्रित व्यवस्था प्राप्त करने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है।

सर्वोदय व्यवस्था का सामाजिक पक्ष सबके लिए समावेशी समतामूलक सामाजिक संरचना में निहित है सामाजिक सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के लोगों की समानता, न्याय तथा समावेशी होने के सिद्धान्त पर आधारित होंगे। चूंकि समाज प्रत्येक व्यक्ति का कल्याण चाहेगा। अतः अन्य व्यक्तियों के प्राचीन तथा विभाजक उद्देश्यों में निहित सामाजिक रूप से अपमानजनक तथा भेदभावपूर्ण व्यवहार के लिए कोई स्थान नहीं होगा। जे.पी. समाज के विभिन्न वर्गों की भूमिका के सम्बन्ध में निश्चित थे तथा युवाओं में दूरदृष्टि की मानसिकता तथा मिशनरी उत्साह चाहते थे। जिनके निःस्वार्थ तथा अथक प्रयास द्वारा समाज की पुनर्रचना को यथार्थ रूप दिया जा सकेगा। सामाजिक अन्तः क्रिया के प्रत्येक क्षेत्र में प्रजातांत्रिक मूल्य व भावना काम करेगी तथा किसी को उसकी इच्छा के विरूद्ध चाहे उसके कार्य की उपयोगिता कुछ भी जो लोगों को समाज के कल्याण के लिए प्रेरित करेगा ।[8]

सर्वोदय का राजनीतिक पक्ष जैसा कि पहले व्याख्यायित किया जा चुका है। पंचायती राज व्यवस्था के रूप में सृदृढ़ विकेन्द्रीकृत तथा सहभागी प्रजातंत्र की व्यापक तथा प्रभावशाली व्यवस्था पर निर्भर करेगा। जे.पी. के सर्वोदय राजनीतिक व्यवस्था में जो स्फूर्तिदायक था, वह राजनीतिक शक्ति तथा राज्य शक्ति के स्थान पर लोकनीति (जनता की राजनीति) तथा लोक शक्ति (लोगों की शक्ति) के चारों ओर घटनाओं का घटना है। गैर–पारम्परिक दिखते हुए भी भारतीय राजनीति के जनकेन्द्रित व समाज केन्द्रित विचार का दृष्टिकोण, जे.पी. के सर्वोदय राजनीतिक व्यवस्था की विकेन्द्रीकरण तथा सहभागी प्रकृति के सतत समर्थन को देखते हुए बहुत स्वाभाविक लगता है। यथार्थतः बाद में वर्षो में जब भारत सरकार पर भ्रष्टाचार तथा राजनीतिक विरोधियों के साथ व्यवहार में अहंकार के आरोप लगे, तब जे.पी. ने उन शक्तियों पर भरोसा किया जिनकी जड़ें सामाजिक तथा गैर–सरकारी सरंचनाओं में निहित थीं। अतः जे.पी. की सर्वोदय सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा में उचित नैतिकता के व्यक्ति शामिल होंगे जिनमें, स्वशासन स्वप्रबंधन, पास्परिक सहयोग तथा सहभागिता, समानता, स्वतंत्रता तथा भ्रातृत्व के लिए उठ खडे होने का साहस हो ।

आर्थिक रूप से, सर्वोदय व्यवस्था देश में संतुलित तथा समता आधारित आर्थिक व्यवस्था की स्थापना करना चाहेगी। भारत के कृषि प्रधान देश होने के कारण जे. पी. लोगों के आर्थिक जीवन में कृषि समबन्ध गतिविधियों को निश्चित रूप से सर्वोपरि रखना चाहते थे। अतः उन्होंने पूरे गाँव के सामूहिक स्वामित्व तथा प्रबन्धन के अन्तर्गत सामूहिक खेती के संचालन के पक्ष में अनेक मत व्यक्त किया। इसके अतिरिक्त, गाँधीवादी आर्थिक दृष्टिकोण में जे.पी. के गहरे विश्वास के कारण स्थानीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों को महत्व देने केलिए उन्हें प्रेरित किया। फिर भी, पूरे विश्व के विभिन्न भागों में भारी उद्योगों की लहर के कारण, अर्थव्यवस्था की औद्योगिक दृष्टि से भारी तथा बड़े उद्योगों को भी स्थान दिया। इस प्रकार सर्वोदय की अर्थव्यवस्था में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को उचित महत्व देते हुए संतुलित पद्धति का अनुसरण किया जाएगा। समाज की आर्थिक गतिविधियों की कुल प्राप्तियों को इस तरह वितरित किया जाएगा। जिससे विकेन्द्रीकृत समृद्ध वितरणात्मक तथा सहभागी आर्थिक व्यवस्था बनेगी ।[9]

सर्वोदय सामाजिक व्यवस्था का गहन और उचित तरीके से अवधारणीकरण करने के बाद, जे.पी. भारत में सर्वोदय व्यवस्था के सृजन की योजना को क्रियान्वित करने की उचित पद्धति का सटीक सुझाव देते है। स्पष्ट रूप से समाज में सशक्त बदलाव की विभिन्न पद्धतियों तथा सांस्थानिक व्यवस्थाओं के गहन ज्ञान तथा व्यक्तिगत अनुभव ने उन्हें वांछित सामाजिक परिवर्तन लाने की पारम्परिक पद्धतियों के प्रति विद्रोही बना दिया। उदाहरण के लिए क्रान्तिकारी हिंसा के द्वारा सामाजिक परिवर्तन के शास्त्रीय मार्क्सवादी नुस्खे के प्रति अपना पुराना लगाव अब उन्हें प्रिय नहीं लगता था। सामाजिक परिवर्तन की हिंसक पद्धति को नकारते हुए उन्होंने कहा कि ऐसी पद्धति दृष्टिगत होते उद्देश्य की सच्चाई का ध्यान नहीं रखती तथा उन लोगों की विजय सुनिश्चित करती है जो इसके प्रयोग में दक्ष हों, रूसी अनुभव से मुख्य रूप से यह स्पष्ट होता है कि ऐसी पद्धति से मिली विजय आवश्यक रूप से सर्वसत्तावादी होगी तथा प्रजातंत्र तथा सामाजिक न्याय व समानता की प्राप्ति के सभी प्रयासों को क्षति पहुचाएगी । .

महत्वपूर्ण रूप से जे.पी. का समााजिक परिवर्तन की उदारवादी पद्धति से भी समान रूप से मोह भंग हो चुका था जिसे कानूनी प्रावधानों तथा उनके लागू करने की सांस्थानिक व्यवस्थाओं के माध्यम से प्राप्त किया जाना है। सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए संसदीय व्यवस्था के मार्ग के प्रति जे.पी. की आलोचना मुख्य रूप से यह थी कि इसमें तब तक वांछित परिणाम प्राप्त नहीं होगे। जब तक लोगों को ऐसे परिवर्तनों को अपने जीवन में स्वीकार करने व उनके अनुकूल होने के लिए मानसिक रूप से तैयार न किया जाए। जैसा कि उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा–

'न संस्थाएं, न कानून, न राजनीतिक व्यवस्था व संविधान अच्छे लोगों की रचना कर सकते है। वास्तविक अर्थ में इसके लिए शिक्षा की व्यापक प्रक्रिया की आवश्यकता होगी। शिक्षा का अर्थ किताबी शिक्षा नहीं है अपितु स्नेह, उदाहरण, उपदेश विवेक तथा तर्क के द्वारा मानव को बेहतर बनाना है ।'

जे.पी. ने देश के नेताओं और जाग्रत नागरिकों से ठोस उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए भी कहा, ताकि जनसाधारण ऐसे उदाहरणों का अनुसरण कर सकें तथा देश में नई सर्वोदय व्यवस्था लाने में प्रमुख भूमिका निभाने के लिए स्वयं को शिक्षित कर सके ।

शिक्षा तथा ठोस उदाहरण के दो गुणों का सम्मिलित परिणाम, जे. पी. के अनुसार लोगों के मानसिक तथा नैतिक मूल्यों में जागरण की अमिट छाप के रूप में होगा। जिसके फलस्वरूप समाज में व्याप्त समस्याओं तथा उनके सम्भावित समाधानों के प्रति उनमें स्वेच्छा से कुछ करने की इच्छा जाग्रत होगी। ऐसे नैतिक सैद्धान्तिक विचारों के ठोस उदाहरण को विनोबा भावे द्वारा प्रारम्भ किए गए भूदान तथा ग्रामदान आन्दोलनों के रूप में देखा जा सकता है। लोगों द्वारा स्वेच्छा से अपना हिस्सा बांटने के विचार और व्यवहार से जे.पी अत्यन्त प्रभावित थे तथा सम्पत्ति दान (सम्पत्ति का आपस को आपस में बांटना) तथा अन्ततः जीवनदान (व्यक्ति द्वारा अपने पूरे जीवन को बांटने और उसे दूसरों के कल्याण के लिए समर्पित करना) द्वारा उन्होंने ऐसे आन्दोलनों को सशक्त करने तथा बढ़ाने के लिए कहा। जे.पी. का अनुमान था कि अपने जीवन की ऐसी महत्वपूर्ण प्राप्तियों को आपस में स्वेच्छा से बांटने से सर्वोदय व्यवस्था के आधार पर भारतीय समाज का अहिंसक स्वेच्छिक तथा प्रजातांत्रिक परिवर्तन होगा।

भारत को प्रजातांत्रिक, संघीय, सहभागी, समताधारित तथा समृद्ध राश्ट्र में परिवर्तित करने के लिए देश में ऐसी अनुकूल सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था बनाने की उत्कट इच्छा के कारण सम्पूर्ण क्रान्ति जे.पी. का अंतिम बौद्धिक प्रयास था । सम्पूर्ण क्रान्ति का विचार विनोबा भावे के दिमाग में प्रथम बार 1960 में आया जिसका उद्देश्य देश में व्यापक आन्दोलन की आवश्यकता की इच्छा को प्रकट करना था जो 'एक नए इन्सान को आकार देने के लिए, मानव जीवन को परिवर्तित करने के लिए तथा नए विश्व की रचना करने के लिए जीवन के सभी पक्षों को परिवर्तित करेगा।' जे.पी. ने 1975 में इस विचार का प्रयोग सम्पूर्ण क्रांति के लिए लोगों को प्रेरित करने के लिए किया ताकि सार्वजनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में फैली गन्दगी को साफ किया जा सके तथा नई विश्व व्यवस्था स्थापित की जा सके जिसमें सामाजिक–आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के वे सभी तत्व हों जिनकी सर्वोदय के नाम पर वे वकालत करते रहे थे ।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व में सरकारी तंत्र के कार्यकरण में बढ़ते सर्वसत्तावाद ने जे.पी. को सम्पूर्ण क्रान्ति का आह्वान तत्कालीन सरकार के विरूद्ध आन्दोलन के लिए उत्प्रेरक नारा बन गया। ऐसे शासन का दुष्परिणाम भारत के राजनीतिक जीवन के सभी पक्षों में फैलता भ्रष्टाचार था। अतः 1975 में आपातकाल की घोषणा के बाद जे. पी. लोगो के सम्पूर्ण सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक, शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तन हेतु देश में सम्पूर्ण क्रान्ति का आह्ान करने के लिए बाध्य हुए। उनका विश्वास था कि छोटे–मोटे टुकड़ों में बदलाव भारत में वांछित स्तर का सम्पूर्ण परिवर्तन लाने के लिए पर्याप्त नहीं है। अतः सम्पूर्ण क्रान्ति के अपने आह्ान के द्वारा वे न केवल सत्ता के संतही सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तन के प्रति असंतुष्ट दिखे, अपितु उन्होंने सम्पूर्ण व्यवस्था के व्यापक परिवर्तन के लिए जनता में जागरूक चेतना के प्रभावी होने और

गहराई तक जाने के लिए भी कहा। इस प्रकार का परिवर्तन देश में मानवीय जीवन के सभी पक्षों के मूल आध्यात्मिक आधार की पुनर्स्थापना से ही सम्भव होगा ।

जे.पी. के सम्पूर्ण क्रान्ति के विचार का उद्देश्य स्पष्टतः राजनीतिक व आर्थिक शक्तियों के कतिपय लोगों के हाथों में सीमित होने से देश के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक जीवन में फैली गन्दगी की लहर को मिटा देना तथा जनता के हाथों में शक्ति का विकेन्द्रीकरण करके इन क्षेत्रों में संस्थाओं और प्रक्रियाओं की पवित्रता की पुनर्स्थापना करना था। राजनीतिक व्यवस्था के क्षेत्र में जे.पी. ने प्रचलित संसदीय व्यवस्था की अन्तर्निहित कमियों पर ध्यान दिया क्योंकि इसके प्रमुख गुणों, जैसे निर्वाचन व्यवस्था, दल आधारित राजनीतिक प्रक्रिया तथा एक व्यक्ति प्रधानमंत्री, के हार्थो में बढ़ते सत्ता के केन्द्रीकरण के कारण व्यवस्था के भ्रष्ट, अत्याचारी के रूप में परिवर्तित होना अनिवार्य है। अतः अपनी सम्पूर्ण क्रान्ति की परिकल्पना में, वे निर्वाचन प्रणाली को इस प्रकार सुधारना चाहते थे, जिससे लोग अपनी स्वतंत्र चेतना के अनुकूल मतदान कर सकें । इसके अतिरिक्त, ऐसी व्यवस्था में राजनीतिक दलों के लिए कोई स्थान नहीं होगा तथा विभिन्न स्तरों की सरकार में शक्तियों के विस्तार से सत्ता के कतिपय व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होने की सम्भावना सीमित हो जाएगी।

राजनीतिक शक्ति की भांति, समाज में कुछ व्यक्तियों के हाथ में आर्थिक शक्तियों के केन्द्रीकरण के विपरीत असर का भी जे.पी. को विश्वास था। अतः उन्होंने देश की आर्थिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण का भी आह्वान किया। भारत के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था की संरचना के पक्ष में बोलते हुए उन्होंने ने इच्छा व्यक्त की कि देश की आर्थिक व्यवस्था में वितरण व्यवस्था लोगों की मूलभूत आवश्यकताएं यथा भोजन, कपड़ा तथा आवास को पूरा करने योग्य होनी चाहिए। उनका सम्पत्तिदान का विचार और कुछ नहीं अपितु सम्पत्ति तथा आर्थिक संसाधनों का इसतरह वितरण करना था जिससे कि इसके उपयोग का लाभ समाज में बड़ी संख्या में लोगों को हो, न कि समृद्धि कुछ ही हाथों में सिमट कर रह जाए। उन्होंने देश में ऐसी आर्थिक व्यवस्था की कल्पना की जहां संसाधनों के माध्यमों का प्रगतिमूलक समाजीकरण होगा, यह सहकारी समितियों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना से होगा, जो इसका प्रबन्धन इस तरह करेंगी जिससे समृद्धि का लाभ सबको हो। इस प्रकार, आर्थिक गतिविधियों के क्षेत्र में भी उनके द्वारा रोग की पहचान और निदान सत्ता के क्रमशः केन्द्रीकरण व विकेन्द्रीकरण में निहित थी। अतः उनका सुझाव था कि सर्वोदय कार्यकर्ता का पहला तथा सबसे महत्वपूर्ण कार्य राजनीतिक तथा आर्थिक शक्तियों का वितरण तथा राजनीतिक तथा आर्थिक संस्थाओं का विकेन्द्रीकरण होगा। उनके अनुसार, वस्तुतः, लोगो की सहभागिता के साथ विकेन्द्रीकरण में, सभी बुराइयों, जिन्होंने देश की राजनीतिक, आर्थिक व्यवस्था में गहरे तक पैठ की है, का समाधान निहित है।

1975 में सम्पूर्ण क्रान्ति के क्रियान्वयन के लिए जयप्रकाश नारायण के आह्मान में, भारतीय समाज में सम्पूर्ण परिवर्तन की योजना के क्रियान्वयन को संचालित करने के लिए स्वैच्छिक कार्यकर्त्ताओं की रूपरेखा सम्मिलित थी। उन्होंने लोगों को तत्कालीन सरकार की सर्वसत्तावादी और गलत नीतियों तथा कार्यक्रमों के विरूद्ध उठ खड़े होने तथा इसे आवश्यक इसकी औचित्यपूर्ण सीमा तक सीमित रखने के लिए धैर्यपूर्वक प्रयत्न करने के लिए ललकारा। उन्होंने देश की विधायी संस्थाओं को भंग करने का भी आह्मान किया, क्योंकि वे राजनीतिक तथा आर्थिक भ्रष्टाचार में आकंठ डूबे होने के कारण जनता के मत को प्रतिबिम्बित नहीं कर पा रही थीं। जे.पी. ने बढ़ती कीमतों को भी सम्पूर्ण क्रान्ति का लक्ष्य माना, क्योंकि वस्तुओं की अत्यन्त महंगी कीमत चुका पाने की अक्षमता के कारण लोगों के जीवन को गरीबी और भूख में बदल देने की क्षमता इसमें थी। साथ ही, धर्म और जाति के आधार पर लोगों में भेदभाव को रोकने के लिए देश में व्याप्त सामाजिक असमानता को भी वे दूर करना चाहते थे संक्षेप में, इस प्रकार देश में सर्वोदय सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए दीर्घ सूत्री क्रान्तिकारी परिवर्तन के मार्ग पर चलना प्रारम्भ करने से पूर्व 1975 की सम्पूर्ण क्रान्ति के विचार के क्रियान्वयन में लोगों द्वारा झेली जा रही लगभग सभी बड़ी समस्याएं शामिल थीं।

जे.पी. द्वारा सुझाये गये सम्पूर्ण क्रान्ति के विचार ने कभी–कभी इसके क्रियान्वयन में व्यवहारकर्त्ताओं के मस्तिष्क में गलत धारणा उत्पन्न की। उदाहरण के लिए, निस्सन्देह इसने लोगों में बिजली सी शक्ति फूंक दी

और देश के विभिन्न भागों में, विशेषकर 1974 में, बिहार में विशाल छात्र आन्दोलन को जन्म दिया। लेकिन सम्पूर्ण क्रान्ति के सम्बन्ध में लोगों का दृष्टिकोण दुविधापूर्ण था, क्योंकि बहुत से लोगों ने इसके द्वारा राज्य शक्ति को जनता के अधीन करना समझ लिया। फिर भी, जे.पी. बहुत स्पष्ट थे कि वे राजनीतिक शक्ति की समाप्ति की वकालत नहीं कर रहे थे अपितु इसको यथास्थान प्रस्तुत करना चाहते थे यानी जनता के हाथों में रहने देना चाहते थे। इसी प्रकार, कुछ लोगों ने सम्पूर्ण क्रान्ति के आन्दोलन के संचालन में कतिपय हिंसक साधनों के प्रयोग का मार्ग भी अपनाया, लेकिन जे.पी. अपने विश्वास में दृढ़ थे कि लोगों के शांतिपूर्ण तथा अहिंसक कार्यो द्वारा ही सम्पूर्ण क्रान्ति क्रियान्वित की जा सकती थी ।

जयप्रकाश नारायण का जीवन तथा विचार सदैव परिवर्तित होते रहे, इसका कारण यह था कि उन्होंने अपने व्यक्तित्व तथा मस्तिष्क को नए प्रभावों व अनुभवों के लिए कभी बंद नहीं किया। इसके अतिरिक्त, वे देश की वांछित तथा यथार्थ स्थिति के प्रति जे. पी. के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रारम्भ से ही, उनके के ग्रहणशील मस्तिष्क ने सभी प्रकार के विचारों का इतना स्वागत किया कि जब वे मार्क्सवाद के प्रति आसक्त थे, तब उन्होंने समाजवादी रूस की पद्धति पर भारतीय समाज के क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिए विचार व्यक्त किए। तथापि, भारत लौटने तथा गाँधी के विचारों को धीरे–धीरे समझने पर, साथ ही मार्क्सवादी सिद्धान्त व व्यवहार के प्रति बढ़ते मोहभंग ने उनके विचारों को नया विचाराधाराजन्य आयाम दिया जिसे सर्वोदय के नाम से जाना गया। फिर भी जे.पी. द्वारा सुझाए गए मार्ग पर देश के चलने में असफल रहने से तथा श्रीमती इंदिरा गाँधी की बढ़ती सर्वसत्तावादी कार्यशैली ने उन्हें सम्पूर्ण क्रान्ति के आह्वान के लिए प्रेरित किया, लेकिन उनका सम्पूर्ण क्रान्ति का विचार भी क्षणिक सिद्ध हुआ, क्योंकि 1980 में देश में श्रीमती इंदिरा गाँधी का शासन फिर से हो गया । अतः जयप्रकाश नारायण द्वारा भारतीय राजनीति के यथार्थ में वैचारिक प्रतिरोध व्यावहारिक के स्थान पर सैद्धान्तिक महत्व के अधिक रहे, क्योंकि जे. पी. स्वप्नदृष्टा तथा अति आदर्शवादी थे।

निष्कर्षतः यह निः संकोच कहा जा सकता है कि जयप्रकाश नारायण एक विचारशील प्रकृति के चिन्तक थे, उन्होंने साम्यवादी धारणा को परखने के पश्चात् ही त्यागा तथा भारतीय मूल्यों एवं आदर्शो यथा, अंहिसा, सर्वोदय तथा लोकतंत्र में गहरी आस्था प्रकट की।

जयप्रकाश नारायण के दर्शन में होने वाले परिवर्तनों में विश्वनाथ प्रसाद वर्मा, डॉ. आर. ए. प्रसाद तथा प्रो. विमल प्रसाद ने कोई वैचारिक असंगठितता नहीं बताई है। आर.ए. प्रसाद ने जयप्रकाश का मूल्यांकन इन शब्दों में किया है जे.पी. के नाम से लोकप्रिय इस व्यक्ति ने भारत में समाजवादी विचारों के प्रचार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तथा उन्हें एस. एस. पी. के सृजन का श्रेय दिया जाना चाहिए। जे.पी. के समाजवादी विकास में स्पष्टतः तीन चरण परिलक्षित होते हैं उनके विचारों के यह रूपान्तरण क्रमिक एवं विकासवादी कहे जा सकते हैं। मजे की बात यह कि किसी एक चरण में भी वे अपना वैचारिक विकास नहीं रोकते हैं । प्रो. विमल प्रसाद इसी क्रम में अपना अभिमत प्रकट करते हैं। उन्हें भारत में पैदा हुए राजनीतिक चिन्तकों में महानतम की संज्ञा दी जानी चाहिए। उन्होने 25 वर्षो तक भारतीय समाजवादी आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान किया और उनके विचारों की अपील किसी भी परिस्थिति में भारत तक सीमित नहीं है । प्रो. विश्वनाथ प्रसाद ने जे.पी. के विचारों का विवेचन करते हुए कहा है कि नरेन्द्र देव तथा जयप्रकाश नारायण ने समाजवादी विचारधारा को जनता को साम्राज्यवादी राजनीतिक आधिपत्य तथा देशी सामन्तवाद से मुक्त करवाने की दिशा में मोड़ दिया। इस प्रकार उन्होंने समाजवादी दर्शन को दो युद्धों का समरघोष बनाया राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम तथा सामाजिक क्रान्ति।[10]

निष्कर्षतः जयप्रकाश नारायण का व्यक्तित्व मूलतः तीव्र अनुरागी रहा है, फलतः उनका व्यवहार एक निम्न माध्यम वर्गीय पारिवारिक पृष्ठभूमि के अनुरूप कहा जा सकता है। ओमकार शरद ने इस संदर्भ में कहा है। (अ) जे.पी. का ह्रदय साहित्य की ओर था मष्तिष्क विज्ञान की ओर, (ब) जे.पी. गीता के भक्त हो गये थे (स) वास्तव में प्रभावती जे.पी. की शक्ति रही है। (द) जे.पी. का शैक्षणिक प्रशिक्षण समाजशास्त्रीय रहा, जबकि उनकी मान्यताएं मार्क्सवादी बनी रही। इन सब आधारों पर ही ओंकार शरद का मानना है कि जे.पी. का चरित्र ही ऐसा है जहां गये, पूरी शक्ति से गये और जब मन टूटा तो सब छोड़ कर, तोड़कर वापिस आ गये। इन उपर्युक्त

आधारों पर जे.पी. के व्यक्तित्व के कतिपय ऐसे विरोधाभास उभरते हैं जिनका सरलता से विलयन नहीं हो पाता है, दूसरी तरफ इस प्रसंग में प्रभावती जी की भूमिका भी निर्णायक ही कही जा सकती है उदाहरणार्थ नम्बूदीदीपाद दम्पत्ति तथा सुचेता तथा आचार्य कृपलानी दम्पत्ति को ले जहां पहले परिवार में ई०एम०एस० नम्बूदीदीपाद गांधीवाद से साम्यवादी बने वहां गांधीवादी आचार्य जे. बी. कृपलानी समाजवादी दल में पहुंच गये । आलोचनाओं के उत्तर में जे.पी. स्वयं मानते हैं लेकिन जब मैं विगत में झांकता हूॅ तो मुझे उन घटनाओं की विकास एक दिशा तथा साम्यता की प्रतीति होती है।

इन सभी आलोचनाओं को प्रस्तुत करने का तात्पर्य यह नहीं है कि जे.पी. की वैचारिक या वित्तीय ईमानदारी के बारे में कुछ भी संदेह किया जा सकता है, वास्तव में जे.पी. की शक्ति तथा कमजोरी रही है – उनकी बाल सुलभ सहजता तथा पारदर्शी ईमानदारी एवं हृददजों का वतरस का मोह। इसी से वे ठगे जा सकते हैं। अगर ऐसा नहीं होता तो सी.पी. आई. की वैज्ञानिक मार्क्सवादी आलोचना तो उन्हें कभी का समाप्त कर देती वह प्रतिक्रियावादी सोशल फासिस्ट तथा अमरीकी दलाल तक कहने से भी नहीं हिचकी ।

वास्तव में हमारे देश की समस्या यह है कि या तो यही किसी को देवता सिद्ध किया जाता है या राक्षस। फलतः यहां किसी भी व्यक्ति या दर्शन का उचित मूल्यांकन नहीं हो पाता अगर गलती करने का नाम ही मनुष्य है तो जे. पी. भी एक राष्ट्रप्रेमी सहृदय मित्र, लोकतंत्रप्रेमी तथा कुशल मानवतावादी सिद्ध होते हैं। स्वतंत्रता के लिए अदभुत बलिदानी जयप्रकाश ने भारत के इतिहास में अपना अतुलनीय इतिहास बना लिया है। सम्पूर्ण जीवन में जे. पी. गांधी की परम्परा में अभी भी क्रियाशील विचारक है । उन्होंने अपनी त्रुटियों को कभी छिपाया नहीं और अपनी वैचारिक अज्ञानता अथवा अल्पक्षता को उन्होंने मुहावरेदार भाषा में कभी भी छिपाया नहीं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चक्रवर्ती विद्युत एवं पाण्डेय राजेन्द्र कुमार : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन विचार एवं सन्दर्भ', सेज पब्लिकेशन इण्डिया, न्यू देहली प्रा.लि. 2016, पृ.सं. 120
2. उपरोक्त, पृ. 121
3. शर्मा वीरेन्द्र : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएं, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.सं. 643
4. शर्मा वीरेन्द्र : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएं, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.सं. 643
5. शर्मा वीरेन्द्र : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएं, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.सं. 643
6. शर्मा वीरेन्द्र : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएं, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.सं. 643
7. चक्रवर्ती विद्युत एवं पाण्डेय राजेन्द्र कुमार : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन विचार एवं सन्दर्भ', सेज पब्लिकेशन इण्डिया, न्यू देहली प्रा.लि. 2016, पृ.सं. 125
8. सूद ज्योति प्रसाद : 'आधुनिक राजनीतिक विचारों का इतिहास', भाग 4, के.नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ, 2006–07, पृ.सं. 222
9. सूद ज्योति प्रसाद : 'आधुनिक राजनीतिक विचारों का इतिहास', भाग 4, के.नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ, 2006–07, पृ.सं. 224
10. चक्रवर्ती विद्युत एवं पाण्डेय राजेन्द्र कुमार : 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन विचार एवं सन्दर्भ', सेज पब्लिकेशन इण्डिया, न्यू देहली प्रा.लि. 2016, पृ.सं. 131

❖◆❖